P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-6 * ISSUE-5 * (Part-1) January- 2019
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

पंचायती राज व्यवस्था में महिला ग्राम प्रधानों की भूमिका

ओमप्रकाश महला
एसोसिएट प्रोफेसर,
लोक प्रशासन विभाग,
राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर, भारत

नीतू
शोधार्थी,
लोक प्रशासन विभाग,
राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर, भारत

सारांश

भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था अपनी विशालता के कारण विश्व में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। विश्व के अनेक देशों में जनतंत्रीय व्यवस्था विद्यमान है किन्तु भारतीय जनतंत्र अपना पृथक् अस्तित्व रखता है, क्योंकि यहां के गांवों में स्थानीय स्तर पर पंचायतें जनता की समस्याओं का समाधान कर रही हैं। लोकतंत्र की सफलता का मूलमंत्र भी यही है कि ग्रामीण स्तर पर लोकतांत्रिक संस्थाओं में जनता की पूर्ण व प्रत्यक्ष भागीदारी हो। लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण का सटीक प्रमाण अन्यत्र देखने को नहीं मिलता जितना भारत में स्थानीय स्तर पर। इसका कारण यह है कि यहाँ जनता और उसके प्रतिनिधियों, शासक एवं शासितों के मध्य सम्पर्क अपेक्षाकृत निरन्तर, सतर्कतापूर्ण संचालित रहता है। भारत के संविधान निर्माताओं ने लोकतंत्र के प्रमुख अस्त्र वयस्क मताधिकार को इस दृढ़ विश्वास से प्रेरित होकर ही स्वीकार किया था कि लोकतांत्रिक प्रक्रिया के सफलतापूर्वक संचालन के लिए जनता की इच्छा ही सर्वोपरि होती है। इस उदात्त उद्देश्य की प्राप्ति हेतु भारत में लोकतांत्रिक प्रक्रिया को गांवों तक पहुँचाने का संकल्प लिया गया। पंचायतों व उनमें महिलाओं की भागीदारी के बारे में संविधान सभा का उल्लेख करना आवश्यक है। पंचायतों म महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित हो, इसके बारे में कोई चर्चा नहीं हुई। पुरुषों से पृथक् स्त्रियों की अपनी कोई पहचान नहीं रही। अतीत में भारत में पंचायतें थीं, इसके अनेक प्रमाण मिलते हैं लेकिन इनमें महिलाओं की भागीदारी भी थी–इसके प्रमाण नहीं मिलते। स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय संविधान निर्माताओं नें अत्यन्त सावधानीपूर्वक सदियों से चले आ रहे स्त्री और पुरुष के अधिकारों के भेदभाव को सुनिश्चित तौर पर मौलिक अधिकारों एवं नीति निर्देशक तत्वों में विशेष प्रावधान जोड़कर समाप्त किया जाये तथा महिलाओं की भागीदारी को और भी बढ़ावा दिया जाये। इसके लिए सरकार, समाज एवं आम जनता का भी विशेष प्रयास करने होंगे।

मुख्य शब्दः लोकतंत्र, जनतंत्र, सामाजिक व्यवस्था, मौलिक अधिकार, संविधान।

प्रस्तावना

भारतीय लोकतांत्रिक व्यवस्था अपनी विशालता के कारण विश्व म महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। विश्व के अनेक देशों में जनतंत्रीय व्यवस्था विद्यमान है किन्तु भारतीय जनतंत्र अपना पृथक् अस्तित्व रखता है, क्योंकि यहां के गांवों में स्थानीय स्तर पर पंचायतें जनता की समस्याओं का समाधान कर रही हैं। लोकतंत्र की सफलता का मूलमंत्र भी यही है कि ग्रामीण स्तर पर लोकतांत्रिक संस्थाओं में जनता की पूर्ण व प्रत्यक्ष भागीदारी हो। लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण का सटीक प्रमाण अन्यत्र देखने को नहीं मिलता जितना भारत में स्थानीय स्तर पर। इसका कारण यह है कि यहाँ जनता और उसके प्रतिनिधियों, शासक एवं शासितों के मध्य सम्पर्क अपेक्षाकृत निरन्तर, सतर्कतापूर्ण संचालित रहता है।[1] भारत के संविधान निर्माताओं ने लोकतंत्र के प्रमुख अस्त्र वयस्क मताधिकार को इस दृढ़ विश्वास से प्रेरित होकर ही स्वीकार किया था कि लोकतांत्रिक प्रक्रिया के सफलतापूर्वक संचालन के लिए जनता की इच्छा ही सर्वोपरि होती है। इस उदात्त उद्देश्य की प्राप्ति हेतु भारत में लोकतांत्रिक प्रक्रिया को गांवों तक पहुँचाने का संकल्प लिया गया।

प्रारूप तभी सार्थक हो सकता है जबकि समुदाय के सभी वर्ग राजनीतिक, सामाजिक व आर्थिक प्रक्रिया में समान रूप से व सक्रिय रूप से भागीदार बनें।

भारत की तरह विशाल जनसंख्या एवं क्षेत्रीय विभिन्नता वाले देश में लोकतन्त्र को सार्थक एवं कल्याणोन्मुख बनाने के लिए विकेन्द्रीकरण एक अन्तर्निहित अनिवार्यता है। क्रमशः ऊपर से नीचे की ओर शक्ति का अन्तरण होना लोकतान्त्रिक राज्य व्यवस्था में आवश्यक एवं वांछित प्रक्रिया है। लोकतन्त्र में सम्प्रभुता का प्रवाह ऊपर से नीचे की ओर होना ही चाहिए, क्योंकि यह लोकतंत्र की सार्थकता है।[2] सहभागिता लोकतंत्र का मर्म है। सहभागिता का कोई कुल जनसंख्या का लगभग 50 प्रतिशत भाग महिलाओं का होने के कारण महिलाओ की भागीदारी के बिना लोकतांत्रिक प्रक्रिया वास्तविक नहीं बन सकती है।

''हम लोकतान्त्रिक शासन से पूरा लाभ उस समय तक नहीं उठा सकते, जब तक हम यह न मान लें जा सकता है। प्रभावकारी और सक्षम स्थानीय शासन सार्वभौम रूप से सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक आधुनिकीकरण के अंग के रूप में विश्व के विकासशील देशों की माँग है।

भारतवर्ष में प्राचीन काल से गणतन्त्र विद्यमान थे।[4] ब्रिटिश शासनकाल में पंचायतें तथा स्थानीय संस्थाए धीरे–धीरे शक्तिहीन होती चली गईं। स्वतन्त्रता के पश्चात् संविधान के नीति निर्देशक तत्वों में स्थानीय स्वशासन की प्रारम्भिक इकाई के रूप में पंचायतों की व्यवस्था की गई। जनसहभागिता बढ़ाने हेतु 1952 में लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की योजना प्रारम्भ की गई। यह योजना अधिक सफलता प्राप्त नहीं कर सकी।[5] पंचायतीराज संस्थाओं को अधिक प्रभावशाली बनाने तथा विकास कार्यों में जनसहभागिता बढ़ाने के लिए 1957 में बलवन्त राय मेहता समिति द्वारा पंचायती राज की त्रिस्तरीय व्यवस्था का सुझाव दिया गया, जिसे अधिकांश राज्यों द्वारा लागू किया गया।[6]

सन् 1978 में पंचायती राज प्रणाली की समीक्षा के लिए गठित अशोक मेहता समिति द्वारा पंचायतों के द्विस्तरीय ढाँचे तथा पंचायतों में राजनीतिक दलों की सक्रिय भागीदारी पर बल दिया गया।[7] 1985 में योजना आयोग द्वारा नियुक्त जी.बी.के. राव समिति ने पंचायती राज संस्थाओं को अधिक अधिकार दने तथा उन्हें सक्रिय करने की अनुशंसा की।[8] सन् 1986 में डॉ0 लक्ष्मीमल सिंघवी की अध्यक्षता में बनाई गई समिति ने पंचायतों तथा उनके चुनाव के लिए सांवैधानिक प्रावधानों की महत्वपूर्ण अनुशंसा की।[9]

सन् 1991 में पंचायती राज संस्थाओं को अधिक सक्रिय करने के लिए 73वाँ संविधान संशोधन संसद द्वारा पारित किया गया। इसके द्वारा पंचायती राज व्यवस्था में व्यापक परिवर्तन हुआ। 24 अप्रैल, 1993 से यह संशोधन पूरे देश में लागू हुआ। इस संशोधन द्वारा पंचायतों को प्रभावी बनाने के उद्देश्य से अनेक महत्वपूर्ण व्यवस्थाएँ की गईं, इसमें मुख्यतः पंचायतों की वित्तीय व्यवस्था को सुदृढ़ करना तथा पंचायतों के प्रत्येक स्तर पर महिलाओं के लिए एक–तिहाई आरक्षण सम्मिलित है।[10]

ऐसा माना जाता है कि ग्रामीण परिवेश व कृषि की प्रधानता होने के कारण भारत की आत्मा गाँवों में बसती है। स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में सामुदायिक विकास, ग्राम विकास तथा पंचायती राज के विकास के कि सभी समस्याएँ केन्द्रीय समस्याएँ नहीं हैं, और उन समस्याओं को उन्हीं स्थानों पर उन्हीं लोगों द्वारा हल किया जाना चाहिए जो उन समस्याओं से सर्वाधिक प्रभावित होते हैं।''[3] हेराल्ड लास्की का उक्त कथन लोकतन्त्र के उन्नयन में विकेन्द्रीकरण की सार्थकता को प्रतिपादित करता है। लोकतान्त्रिक व्यवस्था में पंचायती राज ही वह माध्यम है जो शासन को सामान्य जन के द्वार तक लाता है। गामीण स्थानीय स्वशासन या पंचायती व्यवस्था भारतीय लोकतन्त्र की आत्मा भी मानी जा सकती है।

स्थानीय शासन की व्यवस्था के बिना कोई भी लोकतन्त्र वास्तविक नहीं कहा जा सकता। इसलिए लोकतन्त्र में स्थानीय स्वशासन की उपेक्षा नहीं की भरसक प्रयत्न किये गए। अति प्राचीन काल से ही भारत में गणराज्य व्यवस्था का रूप देखने को मिलता है जिसमें स्थानीय कबीले के लोग अपने मुखिया का चयन करते थे। मौर्य काल में ग्राम स्तर का अधिकारी 'ग्रामिक' जाती थो। मुग़ल काल में गाँव स्तर पर तीन अधिकारी 'मुकदमा' (देखभाल हेतु), 'चौधरी' झगड़े सुलझाने हेतु, 'पटवारी' राजस्व व भूमि कार्य का कार्य करते थे, साथ–ही–साथ गाँव में बड़े बुजुर्गों की न्याय पंचायत होती थी। ब्रिटिश काल में पंचायती राज व्यवस्था शिथिल हो गयी थी तथापि गाँव आत्मनिर्भर थे, इसी कारण 1830 में इसे 'चार्ल्स मेटकाफ' ने 'लघु गणराज्य' कहा।[11] 1870 में स्थानीय शासन के विकास की नई अवस्था का जन्म हुआ, उस वर्ष 'लार्ड मेयो' का प्रसिद्ध प्रस्ताव आया। उस प्रस्ताव में इस बात का समर्थन किया गया कि शक्ति का विकेंद्रीकरण किया जाए अर्थात् केंद्र से कुछ शक्ति व कार्य लेकर प्रान्तों को दे दिए जाएं। संचार से जुड़े हुए विल्बर शेरम ने शक्ति के केन्द्रीकरण पर बल दिया। इसी प्रकार महात्मा गाँधी ने भी कहा कि भारत की सर्वाधिक जनसंख्या गाँव में निवास करती है इसलिए सत्ता का विकेंद्रीकरण होना चाहिए।

1920 में 'भारत शासन अधिनियम', 1919 लागू किया गया जिसके अंतर्गत प्रान्तों में द्वैध शासन प्रणालो लागू की गयी। इसमें सत्ता को दो भागों में विभाजित किया गया जिसके द्वारा प्रान्त में गवर्नर और राज्य के मंत्री उत्तरदायी थे। इस प्रणाली में कुछ कार्य विकासात्मक प्रकृति के थे जैसे स्थानीय स्वशासन, सहकारिता, कृषि आदि मंत्रियों के नियंत्रण में सौंपे गए।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् ग्रामीण विकास को नई गति देने हेतु 20 अक्टूबर, 1952 को 'सामुदायिक विकास कार्यक्रम' विकास खण्डों के माध्यम से प्रारम्भ हुए। राष्ट्रीय क्षितिज पर महात्मा गांधी के आगमन से पहले जितने भी सुधारवादी आंदोलन चले, उनका बल महिलाओं को उचित स्थान व सम्मान दिलाने पर था, लेकिन महिलाओं को स्थानीय, राज्य व केन्द्र स्तर पर निर्णय लेने की प्रक्रिया में भागीदारी मिले, इसके लिए कोई विशेष प्रयास नहीं हुए। महात्मा गांधी ने पहली बार स्वतंत्रता आंदोलन को महिलाओं की मुक्ति से जोड़ा। 1925 में उन्होंने कहा था "जब तक भारत की महिलाएं सार्वजनिक जीवन में भाग नहीं लेंगी, तब तक इस देश को मुक्ति नहीं मिल सकती। मेरे लिए ऐसे स्वराज का कोई अर्थ

नहीं है, जिसको प्राप्त करने में महिलाओं ने अपना भरपूर योगदान न किया हो।'' गांधीजी की पहल पर पहली बार महिलाएं व्यापक स्तर पर सार्वजनिक जीवन में सक्रिय हुईं। उन्होंने अपने अस्तित्व की सार्थकता प्रमाणित की। यह भी सिद्ध किया कि भारत के पिछड़ेपन का एक कारण महिलाओं की उपेक्षा भी रहा है।

पंचायतों व उनमें महिलाओं की भागीदारी के बारे में संविधान सभा का उल्लेख करना आवश्यक है। पहले तो पंचायतों को संविधान का अंग ही नहीं बनाया जा रहा था क्योंकि डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने गांवों को स्थानीय कूप, अज्ञान, संकीर्णता व साम्प्रदायिकता की गुफा बताकर पंचायतों का विरोध किया था। लेकिन गांधीजी के प्रभाव व अन्य दबावों के कारण अंततः पंचायतें संविधान का अंग बनीं। फिर भी पंचायतों म महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित हो, इसके बारे में कोई चर्चा नहीं हुई। संविधान सभा में पंचायतों की बात तो दूर, विधानमंडल व संसद में भी महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने की बात चली तो उसे भी समता, लिंग व भेदभाव के विपरीत बताकर रद्द कर दिया।[12]

भारत में महिलाएं सामाजिक परिवर्तन के विभिन्न दौर से गुजरी हैं। जाति–व्यवस्था व लिंग–भेद ने उन्हें समाज के साथ सार्थक संवाद स्थापित करने व अपने आपको अभिव्यक्त करने के समुचित अवसर प्रदान नहीं किए। पुरुषों से पृथक् स्त्रियों की अपनी कोई पहचान नहीं रही। अतीत में भारत में पंचायतें थीं, इसके अनेक प्रमाण मिलते हैं लेकिन इनमें महिलाओं की भागीदारी भी थी–इसके प्रमाण नहीं मिलते। तत्कालीन पंचायतों के सदस्यों के लिए जो अर्हताएं निर्धारित की गई थीं, महिलाएं उनकी परिधि में नहीं आती थी।

तत्कालीन समय में महिलाओं की स्थिति अत्यन्त दयनीय थी। उपर्युक्त योग्यताओं के आधार पर महिलाएं चुनाव के योग्य हो ही नहीं सकती थीं। न उनके पास भूमि थी, न उनको शिक्षा ग्रहण करने का अधिकार था, आर्थिक गतिविधियों में संलग्न होना तो बहुत दूर की बात थी। लेकिन जॉन मथाई ने अपनी पुस्तक 'विलेज गवर्नमेंट इन ब्रिटिष इंडिया' में बताया है कि विभिन्न ग्रामीण समितियों के गठन में महिलाओं को सदस्य बनने को मनाही नहीं थी। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने अपनी पुस्तक 'भारत की खोज' में भो इस ओर ध्यानाकर्षित करते हुए लिखा कि ग्रामीण समितियां एक वर्ष के लिए गठित होती थीं और महिलाएं भी ऐसी समितियों की सदस्य हो सकती थीं। इन दो संदर्भों से यह तो ज्ञात होता है कि महिलाएं भी ग्रामीण समितियों की सदस्य बन सकती थीं, लेकिन ऐसा प्रावधान यदि था भी तो उसका अधिक प्रचलन नहीं था। महिलाओं की जीवन–शैली एवं सामाजिक परिस्थितियाँ इतनी जटिल थीं कि वे किसी समिति की सदस्य नहीं बन सकती थीं। इन समितियों को अनेक सार्वजनिक सामाजिक उत्तरदायित्वों का निर्वाह करना पड़ता था, इसलिए महिलाएं इनसे सम्बद्ध नहीं हो पाती थीं। मुग़लों ने अपने शासनकाल में स्थानीय प्रशासनिक व्यवस्था से छेड़छाड़ नहीं की। उनका ऐसा कोई मन्तव्य नहीं था कि वे महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करें। मुग़लकाल में महिलाओं की स्थिति और भी दयनीय हो गई तथा उनकी भूमिका और अधिक संकीर्ण हो गई। सामाजिक, राजनीतिक व आर्थिक गतिविधियों में भाग लेने की अपेक्षा उन्हें घूंघट में बंद कर घर की चारदीवारी तक ही सीमित कर दिया गया। ब्रिटिश काल में पंचायतों के विकास की दिशा में अनेक कदम उठाए गए, जैसे 14 दिसम्बर, 1870 को सत्ता के विकेंद्रोकरण और स्वायत्तशासन के गठन का प्रस्ताव 18 मई, 1882 को लार्ड रिपन का स्वायत्त शासन की इकाई का प्रस्ताव, 1907 में चार्ल्स हॉबहाउस की अध्यक्षता में शाही विकेंद्रीकरण आयोग का गठन तथा ऐसे ही अन्य कदम। किन्तु इन प्रयासों म महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने की दिशा में कोई प्रावधान नहीं किया गया।

स्वतंत्र भारत में पंचायती राज व्यवस्था एंव महिलाओं की भागीदारी

स्वतंत्रता के पश्चात् भी पंचायतों के विकास व उनम महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए कतिपय संक्षिप्त प्रयास पंचायतें गठित करने की अपेक्षा केन्द्र सरकार ने सामुदायिक योजना कार्यक्रम व राष्ट्रीय विस्तार कार्यक्रम चलाए। स्थानीय जनता को राष्ट्रीय विकास में भागीदार बनाने के लिए तदर्थ समितियां, जिनके अधिकांश मनोनीत सदस्य अधिकारी होते थे, अवष्य गठित की गईं, लेकिन इनमें नौकरशाही का ही वर्चस्व था।

इसी आयाम को ध्यान में रखते हुए केंद्र सरकार ने सामुदायिक परियोजनाओं के लिए बलवंत राय मेहता की अध्यक्षता में एक अध्ययन समिति गठित की। इस समिति ने 24 नवम्बर, 1957 को अपनी रिपोर्ट सरकार को सौंप दी। बलवंत राय मेहता समिति ने महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने के उद्देश्य से पंचायत के तीनों स्तरों पर दो महिला सदस्यों को मनोनीत करने का सुझाव दिया। समिति ने यह भी सुझाया कि इन दो महिलाओं का चयन करते समय यह देखना अनिवार्य है कि इनकी महिला एवं बाल कल्याण में रुचि हो। महिलाओं को पंचायतों में भागीदारी सुनिश्चित करन का यह पहला प्रयास था लेकिन आश्चर्य यह रहा कि इन महिलाओं का निर्वाचन के प्रावधान के स्थान पर यह मनोनयन का प्रयास था।[13]

12 जनवरी, 1958 को राष्ट्रीय विकास परिषद् की बैठक म बलवंत राय मेहता समिति की अनुशंसाओं को स्वीकार कर लिया गया। उसके पश्चात् विभिन्न राज्यों ने अपने–अपने पंचायती राज अधिनियम बनाए और लगभग सभी राज्यों ने अपने अधिनियमों में महिलाओं की सदस्यता का प्रावधान किया।

पंचायतीराज अधिनियम में महिलाओं की विभिन्न जिलों यथा–आंध्र प्रदेश, में आरक्षण का प्रावधान था। असम में ग्राम पंचायत स्तर पर एक महिला के सहयोजन का प्रावधान था। बिहार में पंचायत समिति स्तर पर दो व जिला स्तर पर तीन महिलाओं के आरक्षण का प्रावधान था। गुजरात में पंचायत के तीनों स्तरों पर महिलाओं के आरक्षण का प्रावधान था। जम्मू–कष्मीर में जिला बोर्ड में एक महिला को मनोनीत करने का प्रावधान था। केरल में एक स्तरीय पंचायत राज व्यवस्था ही थी जिसमें एक

महिला को मनोनीत करने का प्रावधान था। मध्यप्रदेश में ग्राम व जनपद स्तर पर दो–दो महिलाओं को मनोनीत करने व जिला स्तर पर एक महिला को सदस्य बनाने का प्रावधान था। तमिलनाडु में ग्राम स्तर पर एक महिला को सदस्य बनाने का प्रावधान था। इसी प्रकार राजस्थान में दो महिलाओं को व उड़ीसा में एक महिला को सदस्य बनाने का प्रावधान था। पश्चिम बंगाल में प्रावधान तो था किन्तु कितना था इसका उल्लेख नहीं किया था। केंद्रशासित प्रदेश जैसे दिल्ली मे भी महिला भागीदारी का प्रावधान अधिनियम में था।[14]

यह बहुत आश्चर्य की बात है, कि उत्तर प्रदेश ही एकमात्र राज्य था, जिसने मेहता समिति की त्रिस्तरीय पंचायती राज व्यवस्था को तो माना, किन्तु अन्य राज्यों की तरह पंचायती राज में महिलाओं के सहयोजन की अनुशंसा को नहीं अपनाया। दूसरे, पंचायतों में सदस्यों के रूप में जो महिलाएं सहयोजित हुईं, वे ग्रामीण अभिजात्य वर्ग की ही थीं, क्योंकि समिति ने अनुसूचित जाति की महिलाओं को पंचायतों में लेने की कोई अनुशंसा नहीं की थी। लेकिन अभिजात्य वर्ग की इन महिलाओं की भागीदारी भी बहुत दिनों तक स्थायी नहीं रह सकी क्योंकि प्रारम्भिक उत्साह के पश्चात् अनेक राज्यों में पंचायतों के चुनाव ही नहीं हो पाए और शक्ति व अधिकार के नाम पर उन्हें अंगूठा दिखा दिया गया। इस प्रकार पंचायतें मरणासन्न अवस्था में पहुंच गईं, जिसके परिणामस्वरूप महिलाएं स्थानीय स्वषासन में भागीदारी से वंचित हो गईं।

1971 में भारत में महिलाओं की स्थिति पर भारत सरकार ने एक समिति गठित की। इसने 'समानता की ओर' शीर्षक से अपनी रिपोर्ट दिसम्बर 1974 को प्रस्तुत की। इस समिति ने महिलाओं की राजनैतिक स्थिति का उल्लेख करते हुए कहा था कि वैसे तो महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी बंटी हुई है, किन्तु उनके राजनीतिक रूप से निरक्षर होने तथा राजनीतिक पार्टियों व महिला संगठनों की उदासीनता के कारण वे अपनी दैनिक समस्याओं के संदर्भ में राजनीतिक प्रक्रिया पर कोई विशेष दबाव नहीं बना सकीं। महिलाओं को निर्णय प्रक्रिया में भागीदार बनाने के लिए यह आवश्यक है कि उनकी सामाजिक बाधाओं पर दृष्टिपात किया जाए। समिति ने यह भी कहा है कि महिलाओ को स्थानीय संस्थाओं में विशेष अवसर प्रदान करके और उनका प्रतिनिधित्व बढ़ाकर इन बाधाओं को दूर किया जा सकता है। समिति के अनुसार दो महिलाओं को मनोनीत करने का प्रावधान मात्र 'टोकनिज्म' था। इसलिए यदि अलग से कोई महिला पंचायत होगी तो इन रुकावटों को दूर कर महिलाएं अपनी भागीदारी सुनिश्चित कर सकती हैं। समिति ने कहा थाः इसलिए हम लोग कानूनी तौर पर ग्राम–स्तर पर महिला पंचायतों की स्थापना की अनुशंसा करते हैं जिससे राजनीतिक प्रक्रिया में महिलाओं की अधिक से अधिक भागीदारी सुनिश्चित हो सके। ये संस्थाएं ग्राम पंचायतों की समानांतर संस्थाएं नहीं होंगी। इन्हें पंचायती राज संरचना का एक अभिन्न अंग होना होगा जिसकी अपनी स्वायत्तता होगी और जिसके संसाधन भी अपने होंगे। अभी तक यह परम्परा रही है कि स्थानीय निकायों में अधिकांश महिलाएं न तो अपनी समस्याओं पर बातचीत कर पाती हैं और न इनमें सक्रिय रूप से भाग ले पाती हैं। यदि केवल महिलाओं का ही कोई संगठन होगा तो वह इन कठिनाइयों को सहजता से दूर कर देगा। साथ ही अधिक से अधिक महिलाओं को अपने कामकाज के संचालन का अनुभव प्राप्त करने और अपने काम में आत्मविश्वास लाने का अवसर प्रदान करेगा। समिति की धारणा है कि इस वैधानिक स्थिति का ग्रामीण समाज में महिलाओं की सामान्य स्थिति पर सीधा प्रभाव पड़ेगा और उन्हें जो अनुभव प्राप्त होंगे तथा उनके अंदर उत्तरदायित्व की जो भावना उत्पन्न होगी, उससे आशा है कि राजनीतिक प्रक्रिया में अधिक से अधिक सहभागिता लेने के संदर्भ में महिलाओं की इच्छा और क्षमता में भी वृद्धि होगी, तथा इस तरह के वैधानिक निकायों के अस्तित्व को विभिन्न सरकारी सेवाओं और कार्यक्रमों को क्रियान्वयन के स्तर पर सहायता मिलेगी और बेहतर समन्वय स्थापित होगा। समिति ने यह सुझाव दिया था कि पंचायतों में महिलाएं प्रत्यक्ष रूप से चुनकर आएंगी तथा ग्राम पंचायत स्तर पर चुनी गई महिलाएं ही अपने में से पंचायत समिति व जिला परिषद् स्तर पर अपना प्रतिनिधि नियुक्त करेंगी।[15]

इन अनुशंसाओं को ध्यान में रखकर महाराष्ट्र व आंध्र प्रदेश ने कुछ स्थानों पर महिला पंचायतों का गठन किया। अन्य राज्यों ने इन अनुशंसाओं को ठंडे बस्ते में डाल दिया। इतना ही नहीं, इन अनुशंसाओं को लागू करने के स्थान पर राज्य स्तर के राजनेताओं ने इनके विरूद्ध वातावरण तैयार कर दिया। उन्होंने तर्क दिया कि यदि ये अनुशंसाएं लागू होंगी तो महिलाओं को इनसे कोई लाभ नहीं होगा, क्योंकि ऐसा करने से वे मुख्यधारा से अलग हो जाएंगी, जबकि वास्तव में ऐसा नहीं है। बाद में विभिन्न राज्यों में महिला–पंचायतें गठित हुईं और इसके उपरान्त भी वे न केवल मुख्यधारा में बनी रहीं अपितु उन्होंने तो वह कार्य कर दिखाया जो पुरुषों से संभव नहीं हो पाया। लेकिन यह सब पुरुष मानसिकता का ही परिणाम है क्योंकि वे नहीं चाहते थे कि उनके किले पर किसी और का झंडा फहराए, बहरहाल, महिलाआ की भागीदारी में कोई विशेष वृद्धि नहीं हुई।[16]

बलवंत राय मेहता समिति की रिपोर्ट के दो दषक बाद अशोक मेहता की अध्यक्षता में 1977 मे पंचायती राज समिति का गठन हुआ जिसने अपनी रिपोर्ट अगस्त 1978 में प्रस्तुत की। इस समिति ने पंचायती राज व्यवस्था का मूल्यांकन किया और इस व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए अनेक सुझाव दिए। महिलाओं की भागीदारी बढ़ाने के लिए जिला परिषद् व मंडल पंचायत स्तर पर चुनाव में अधिकतम मत प्राप्त करने वाली दो महिलाओं को सदस्य बनाने की अनुशंसा भी इस समिति ने की थी। साथ ही यह प्रावधान भी किया कि यदि कोई भी महिला चुनाव नहीं लड़ती तो दो महिलाओं का सहयोजन किया जाएगा।

यहां यह उल्लेख करना प्रासंगिक है, कि इस समिति ने दो स्तरीय अर्थात् जिला व मंडल स्तर पर पंचायती राज की अनुशंसा की थी। किन्तु समिति ने पंचायत समिति व गाम समिति गठित करने का सुझाव अवश्य दिया था। पंचायत समिति एक सलाहकार समिति

ही थी। किन्तु अशोक मेहता समिति ने इन दोनों समितियों मे महिलाओं की भागीदारी की अनुशंसा नहीं की थी। उसके अतिरिक्त पंचायतों का कार्य प्रभावशाली व सुचारू रूप से चलाने के लिए समिति प्रणाली अपनाने का सुझाव भी दिया गया था। किन्तु दुःख की बात है कि सुझायी गई समितियों में महिला व बाल विकास समिति के गठन की अनुशंसा नहीं की गई थी जो कि महिलाओं व बाल विकास के विषयों का भलीभांति से अध्ययन कर सके।[17]

अशोक मेहता समिति ने पंचायतों को संविधान की नवीं अनुसूची में रखने के लिए संविधान संशोधन विधेयक 1977 भी रिपोर्ट के साथ संलग्न किया था। इस विधेयक में पंचायती राज व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए अनेक प्रावधान सुझाए गए थे किन्तु महिलाओं की भागोदारी सुनिश्चित करने के लिए कोई प्रावधान नहीं किया गया था। जबकि समिति ने अपने अवलोकन में यह कहा था कि पंचायती राज संस्थाओं की गतिविधियाँ नहीं के बराबर हैं, उनके आधार स्तम्भ कमजोर हैं, उनके प्रति बहुत उपेक्षापूर्ण व्यवहार किया गया है। अपने इस आकलन के उपरान्त भी समिति ने समाज के आधे हिस्से अर्थात् महिलाओं को पंचायतों में भागीदार बनाने के लिए किसी कदम व प्रावधान की अनुशंसा नहीं की, जबकि शोध में पूर्व में ही उल्लेख किया जा चुका है कि 1974 में भारत में महिलाओं की स्थिति पर गठित समिति ने महिलाओं की स्थानीय शासन में भागीदारी बढ़ाने के लिए ग्राम पंचायत से लेकर जिला स्तर तक महिला पंचायतें गठित करने का सुझाव राज्यों को दिया था जिसका कोई विशेष प्रभाव नहीं हुआ। यदि अशोक मेहता समिति 'भारत में महिलाआ की स्थिति' की रिपोर्ट की अनुशंसाओं को अपनी रिपोर्ट में सम्मिलित कर लेती तो हो सकता है महिलाओं की भागीदारी के पश्चात् अधिक प्रभावशाली और बेहतर स्थिति में होती।

अशोक मेहता समिति के पश्चात् सन् 1986 म डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी की अध्यक्षता में पुनः एक समिति पंचायती राज व्यवस्था को मजबूत बनाने में सुझाव देने के लिए गठित हुई। इस समिति ने भी पंचायती राज व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए अन्य अनेक कदम उठाने के साथ–साथ यह सुझाव भी दिया कि पंचायतों को सांवैधानिक स्तर प्रदान किया जाए। ऐसा किए बिना इनका विकास असंभव प्रतीत होता है। इस समिति ने अशोक मेहता समिति में अनुबंधित विधेयक को अपने प्रतिवेदन में मात्र अनुबंधित ही किया और पंचायतों में महिलाओं को आरक्षण देकर उनकी भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए कोई सुझाव नहीं दिया।

अशोक मेहता समिति की रिपोर्ट व 73वें संविधान संशोधन की तैयारी की प्रक्रिया के दौरान दो राज्यों–कर्नाटक तथा केरल–में क्रमशः 1987 व 1990 मे महिलाओं के लिए 25 व 30 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान किया गया जो महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने की दिशा में मील का पत्थर साबित हुआ।

73वें संविधान संशोधन से पहले पंचायतो में महिलाओ की सहभागिता

1959 में बलवंत राय मेहता समिति की अनुशंसाओं को ध्यान में रखकर आंध्रप्रदेश में पंचायत समितियों और जिला परिषद कानून तथा आंध्र प्रदेश ग्राम पंचायत के तीनों स्तरों पर दो–दो महिलाओं को सदस्य बनाए जाने का प्रावधान था। शिक्षा और समाज कल्याण से संबधित कार्यों की स्थायी समितियों में अनुसूचित जाति से कम से कम एक महिला प्रतिनिधि को चुने जाने का भी प्रावधान था। इस व्यवस्था से महिलाओं को कोई वास्तविक राजनीतिक आधार प्राप्त नहीं हुआ क्योंकि न तो महिलाएं ही पंचायतों में भाग लेने में अधिक रुचि रखती थीं और न पुरुष ही चाहते थे कि उनकी भागीदारी इस ओर बढ़े।

महिलाओ की वैधानिकता स्थिति

स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् भारतीय संविधान निर्माताओं नें अत्यन्त सावधानीपूर्वक सदियों से चले आ रहे स्त्री और पुरुष के अधिकारों के भेदभाव को सुनिश्चित तौर पर मौलिक अधिकारों एवं नीति निर्देशक तत्वों में विशेष प्रावधान जोड़कर समाप्त किया। मौलिक अधिकारों में स्वतन्त्रता एवं समानता के अधिकारों का जो प्रावधान किया गया है उसमें स्पष्ट रूप से स्त्री और पुरुष को समान स्तर व अधिकार प्रदान किये गए हैं। लिंग के आधार पर किये जाने वाले भेदभाव को समाप्त किया गया है। नीति निर्देशक तत्वों के माध्यम से समाज के पीड़ित, पिछड़ा वर्ग, महिलाओं, बालका के लिए विशेष अधिकार सरकार को दिये गए हैं। ग्रामीण महिलाओं की दयनीय स्थिति से मुक्ति दिलाने हेतु ग्रामीण अर्थव्यवस्था में उसकी महत्ता को स्वीकारते हुए भारत सरकार ने पंचायत राज में उसकी सहभागिता को आवश्यक माना है इसलिए पंचायत राज में महिलाओं के प्रतिनिधित्व को 33 प्रतिशत आरक्षित कर दिया है। राजस्थान राज्य में तो महिलाओं के प्रतिनिधित्व को 50 प्रतिशत करने का निश्चय कर लिया था किन्तु माननीय उच्च न्यायालय में यह मामला लम्बित है।

15 अगस्त, 1947 को स्वतंत्रता प्राप्त होने तथा 26 जनवरी, 1950 को नया संविधान लागू होने के पश्चात् भी पंचायतों के विकास व उनमें महिलाओं की भागीदारी सुनिशिचत करने के लिए कोई विशेष प्रयास नहीं किए गये। पंचायत गठित करने के स्थान पर केन्द्र सरकार ने सामुदायिक योजना कार्यक्रम व राष्ट्रीय विस्तार कार्यक्रम संचालित किये। स्थानीय प्रयासों को राष्ट्रीय विकास में सहभागी बनाने के लिए तदर्थ समितियां, जिनमें अधिकांश मनोनीत सदस्य ही अधिकारी ही थे, अवश्य गठित की गयीं, किन्तु इनमें भी नौकरशाही का ही प्रभुत्व था।

इसी आयाम को ध्यान में रखते हुए केन्द्र सरकार ने सामुदायिक परियोजना के लिए बलवन्त राय मेहता की अध्यक्षता में एक अध्ययन समिति गठित की। इस समिति ने 24 नवम्बर, 1957 को अपना प्रतिवेदन सरकार को सौंपं दिया। बलवन्त राय मेहता समिति ने महिलाओं की भागीदारी सुनिश्चित करने के उद्देश्य से पंचायतों के तीनों स्तर पर दो महिला सदस्यों को मनोनीत करने को सझाव दिया। समिति ने यह सुझाव भी दिया कि इन दो महिलाओं का चयन करते समय यह देखना अनिवार्य है कि इनकी महिला एवं बाल कल्याण में रुचि

हो। महिलाओं को पंचायतों में भागीदारी सुनिश्चित करने का वह पहला प्रयास था किन्तु आश्चर्य कि बात यह है कि इन महिलाओं को निर्वाचित सदस्यों के रूप में नहीं लिया जाना था।[18]

ग्राम सभा का परिचय

पंचायत में 'ग्राम सभा' एक महत्वपूर्ण इकाई है, पंचायत के विकास का जो रोड मैप बनता है, उसमें सारे फैसले ग्राम सभा में ही लिए जाते हैं। पंचायत के विकास की हर रीति–नीति ग्राम सभा में ही बनतो है। विनोबा भावे ने एक बार कहा था कि 'गांवों का सारा इंतजाम गांवों को अपने हाथ में लेना होगा, अपना भला–बुरा दूसरा कोई नहीं कर सकता, हम खुद ही अपना उद्दार कर सकते हैं, ऐसा आत्मविश्वास गांव वालों में पैदा करना होगा। गांवों का कारोबार संभालन के लिए ग्राम सभा मजबूत बनानी होगी। विनोबा भावे के उक्त विचारों से ओत प्रोत ग्रामीण भारत की स्थानीय शासन व्यवस्था में लोकतंत्र के सबसे निम्न स्तर पर ग्रामीण विकास के लिए ग्राम सभा को संसाधनों के साथ अधिकृत कर अपेक्षा की गई कि 'ग्राम सभा' पंचायत के लिए वैसी ही होगी जैसी राज्य सरकार के लिए विधानसभा होती है। ग्राम सभा का मुख्य कर्तव्य ग्रामीण क्षेत्र में सामाजिक–आर्थिक विकास कार्यों के संचालन में जनसहभागिता सुनिश्चित करना और ग्रामीण सुशासन की संस्थान ग्राम पंचायत पर नियंत्रण रखकर उसे आम जनता के प्रति सीधे जवाबदेही बनाना है।

ग्राम सभा का संगठनात्मक ढांचा

अध्यक्ष–सरपंच,उपसरपंच अथवा वरिष्ठ पंच
सदस्य–पंचायत क्षेत्र के समस्त मतदाता
–ग्राम पंचायत के समस्त पंच (सदस्य)
सचिव–पंचायत समिति (ग्राम सेवक)

राजस्थान पंचायतीराज अधिनियम 1994 में यह प्रावधान किया गया है कि प्रत्येक वर्ष ग्रामसभा की कम से कम दो बैठकें होंगी, पहली वित्तीय वर्ष के प्रथम त्रिमास में और दूसरी अंतिम त्रिमास में।ग्राम सभा के अधिकारों व कर्तव्यों के विषय में पंचायतीराज पर प्रस्तुत सादिक अली प्रतिवेदन में कहा गया था कि ग्राम सभा के अधिकार और कर्तव्यों की परिभाषा नपे–तुले शब्दों में करना कठिन है। धीरे–धीरे काम करने के माध्यम से एक परम्परा विकसित होगी और ग्राम सभा वह महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लेंगी जिससे पंचायतीराज की ऊपर की संस्थाएं शक्ति प्राप्त करेंगी। लोगों को यह अनुभव होना चाहिए कि ग्रामसभा स्थानोय विकास में उनकी आवाज को बुलंद करने और उनके कष्टों को दूर करने में सहायता देने के लिए है। ग्रामसभा की बैठक में सामान्य विचार–विमर्श के लिए जा विषय कार्यक्रम में सम्मिलित किये जाने चाहिए, वे इस प्रकार हैं:–

पंचायत का बजट, पंचायत की ऑडिट रिपोर्ट और इसका अनुपालन, पंचायत की योजना, योजना की प्रगति और विकास की विभिन्न प्रवृत्तियों की रिपोर्ट, पंचायत के काम–काज का ब्यौरा, ग्रामसभा के निर्णयों की क्रियान्विति का लेखा–जोखा, ऋण और सहायता के रूप में प्राप्त धन राशि के उपयोग की रिपोर्ट।

पंचायतीराज अधिनियम संशोधन 2000 के अनुसार ग्रामसभा के कार्यों यथा–सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए योजनाओं, कार्यक्रमों और परियोजनाओं का वार्ड सभा द्वारा अनुमोदित योजनाओं, कार्यक्रमों और परियोजनाओं में से प्राथमिकताओं क्रम में पंचायत द्वारा क्रियान्वयन क लिए हाथ में लिए जाने के पूर्व अनुमोदन करना।

किसी भी विशिष्ट क्रियाकलाप स्कीम, आय और व्यय के विषय में पंचायत के सदस्यों और सरपंच से स्पष्टीकरण मांगना भी ग्रामसभा के कार्यों के अन्तर्गत आता है। ग्रामसभा लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण का प्रथम सोपान है। यह प्रत्यक्ष लोकतंत्र का स्वरूप है। यह एक स्थायी सभा है, जहां लोग स्वयं अपने गांव की योजना बनाते हैं। 73वें संशोधन के अनुच्छेद 243 में ग्रामसभा को ग्राम स्तर पर पंचायत के क्षेत्र के भीतर समाविष्ट किसी ग्राम से संबंधित निर्वाचक नामावली में रजिस्ट्रीकृत व्यक्तियों से मिलकर बना बताया गया है। अभिप्रेत है कि अनु. 243(क) के अनुसार ग्राम सभा, ग्राम स्तर पर ऐसी शक्तियों का प्रयोग और ऐसे कृत्यों का पालन कर सकेगी, जो किसी राज्य के विधानमंडल द्वारा, विधि द्वारा, उपबंधित किए जाए। स्थानीय स्तर की समस्या, उनका निदान स्वरूप और भावी रणनीति पर चिंतन मनन भी ग्राम सभा की बैठक में होता है।

ग्राम सभा में महिलाओ की भागीदारी

देश के दूसरे विधानसभा चुनाव में जहाँ महिलाओं का प्रतिनिधित्व न के बराबर था, 15वीं लोकसभा के चुनाव में 59 महिलाओं का निर्वाचित होना अपने आप में एक सुखद स्थिति है, किन्तु ध्यान देखने योग्य तथ्य यह है कि एक अरब से अधिक की जनसंख्या वाले देश में मात्र 59 महिला निर्वाचित होती हैं, वहां उस आधी जनसंख्या की राजनीतिक चेतना एवं जागृति पर प्रश्न चिह्न लगाया जाना स्वाभाविक है।

ग्राम सभाओं में महिलाओं की भूमिका पर विचार करते हुए यह देखना होगा कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था के कायाकल्प के लिए मौजूद तंत्र क्या है? सरकारी ढांचे के तहत ई–पंचायत, महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम और भारत निर्माण जैसी फ्लैगशिप योजनाएं हैं इन सभी योजनाओं में महिलाओं की भागीदारी के क्रियान्वयन में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है। जिसके अन्तर्गत जनकल्याण को केन्द्र में रखते हुए इसे बेहतर व त्वरित ढंग से कार्यान्वित करने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर सकती है।

पंचायती राज के सन्दर्भ में महिलाओ की भूमिका

23 अप्रैल, 1994 को 73वें संविधान संशोधन लागू होने के पश्चात् महात्मा मोहनदास करमचन्द गांधी द्वारा संकल्पित पंचायत सरकार अर्थात् स्थानीय स्वशासन की सरकार की धारणा ने प्रथम बार एक मूर्त रूप धारण किया। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का यह स्वप्न था कि एक हरिजन बाला को भारत के राष्ट्रपति भवन का स्वामी बनाया जाए, जिससे भारतीय लोकतंत्र का मस्तक गौरवान्वित हो सके। प्रस्तुत कदम इसी दिशा में उठाया गया महत्वपूर्ण चरण है। यह सर्वविदित तथ्य है कि नवीन सांवैधानिक व्यवस्था में 33 प्रतिशत स्थान महिलाओं के

लिए आरक्षित किए गए हैं। ऐसा एक तिहाई आरक्षण पंचायती राज के हर स्थान पर किया गया है, जिससे नारी शक्ति की सहायता से स्थानीय स्वशासन की धारणा को यथार्थ में रूपान्तरित किया जा सके। पंचायतों का कार्यकाल सुनिश्चित कर दिया गया है, इसके लिए पृथक् से चुनाव एवं वित्त आयोग की भी व्यवस्था की गई है।

अध्ययन का उद्देश्य

1. सदियों से उत्पीड़ित विश्व की 50 प्रतिशत जनसंख्या महिलाओं के उद्वार, कल्याण व विकास की लहर 1970 के दशक में पूरे विश्व में दौड़ गई का आंकलन करना।
2. महिलाओं में अपने अधिकारों के प्रति सजगता बढ़ी है।
3. विश्व भर में महिलाओं का महिला विकास आन्दोलन का मुद्दा जोर पकड़ने लगा है।
4. महिला विश्व भर में अनुसंधान का विषय बनती जा रही हैं।

निष्कर्ष एंव सुझाव

लोकतंत्र मूलतः शासन के विकेन्द्रीकरण पर आधारित व्यवस्था है। लोकतंत्र की जड़ें पंचायतीराज व्यवस्था में निहित हैं। यदि ग्रामीण स्तर पर स्थानीय सस्थाएँ कमज़ोर हैं तो हमारा शीर्ष शासन सफलता अर्जित नहीं कर सकता, अतः स्थानीय शासन सुदृढ़ होना चाहिये। तात्पर्य यह है कि लोकतंत्र में जनता की समस्या और उन समस्याओं के समाधान हेतु जनता की पूर्ण भागीदारी आवश्यक है और यह तभी संभव है जब देश की ग्रामीण जनता के प्रतिनिधियों की इसमें सक्रिय सहभागिता हो। विशेष रूप से स्थानीय स्तर पर पंचायतों में महिलाओं का प्रतिनिधित्व होना चाहिए। स्थानीय समस्याओं के समाधान में स्थानीय स्तर के लोगों की अधिक सक्रियता वांछनीय है क्योंकि वे इन समस्याओं से न केवल अधिक प्रभावित रहते हैं अपितु वे सहज समाधान भी सुझा सकते हैं। यदि महिलाओं को इन समस्याओं के समाधान हेतु निर्णय प्रक्रिया में अधिसंख्य रूप से सम्मिलित किया जाए तो व्यवस्था को सही अर्थों में लोकतान्त्रिक कहा जा सकता है।

पंचायतों को पुनर्जीवित करने हेतु गम्भीरता से चिंतन कर संविधान में 73वां संशोधन किया जिसमें महिलाओं की भागीदारी को सुनिश्चित करने हेतु निम्न तर्कों को आधार माना जा सकता है–

1. महिलाओं की संख्या कुल जनसंख्या की लगभग आधी है और वे ग्रामीण भारत के आधे से अधिक आर्थिक जीवन में सक्रिय रूप से भागीदार हैं। हमारे लिए यह सोचनीय बात है कि परिसम्पत्तियों और आय में उनका भाग जनसंख्या के अनुपात में अत्यधिक कम है, किन्तु उन पर जो दायित्व का बोझ डाला जाता है वह जनसंख्या के अनुपात में कहीं अधिक है।
2. घर परिवार के सुचारू संचालन के लिए पर्याप्त धन की व्यवस्था करना भी महिलाओं का एक बड़ा दायित्व रहा है। ग्रामीण भारत की महिलाओं के व्यवहार के अनुसार उनमें अधिक अनुशासन और राजकोशीय उत्तरदायित्व निहित होता है। ये ऐसे गुण हैं जिनकी पंचायती राज संस्थाओं में अधिक आवश्यकता होती है। पंचायतों में महिलाओं की अधिक संख्या में सहभागिता से न केवल पंचायत में उनका अधिक प्रतिनिधित्व होगा अपितु वे और अधिक कुषल, ईमानदार, उत्तरदायी व अनुशासित बनकर अपने दायित्वों का निष्ठापूर्ण निर्वाह करेंगी।
3. दादियों, माताओं के रूप में भारत की महिलाएं हमारी प्राचीन संस्कृति और परम्पराओं का एक मुख्य स्त्रोत रही ह। शाश्वत ओर सनातन मूल्य, मानदण्ड और आदर्श भावी पीढ़ी को सौंपने का दायित्व महिलाएँ ही निभाती रही हैं जिनसे हमारी सभ्यता इतने उतार–चढ़ावों के बाद भी जीवन्त और समृद्ध बनी हुई है। महिलाएं पंचायतों को नैतिक चरित्र की शक्ति भी प्रदान करेंगी।
4. पंचायतीराज व्यवस्था में महिलाओं के आरक्षण के औचित्य के संदर्भ में दिये गये उक्त तीना बिन्दु निश्चित रूप स समग्र आदर्श का प्रतिनिधित्व करने के साथ–साथ उनके विषाल और बढ़ते हुए दायित्व का बोध कराते हैं।

पंचायती राज में महिलाओ की भागीदारी हेतु कतिपय सुझाव

1. भारत में आधी जनसंख्या महिलाओं की है। महिलाओं को उनके अधिकारों के प्रति सचेत करने का दायित्व सरकार का है, अतः ऐसी कार्य योजनाएं प्रारम्भ की जानी चाहिए जो महिलाओं के पूर्ण विकास में लाभकारी हों।
2. लोकतन्त्र की सफलता के लिए यह भी आवश्यक है कि राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय सभी महत्वपूर्ण मामलों की जानकारी सही और निष्पक्ष तरीके से स्वयं सरकार द्वारा जनता को दी जानी चाहिये, इसके लिए संचार माध्यमों एवं विज्ञापनों को अधिक महत्व दिया जाना चाहिये।
3. लोकतन्त्र की भव्य इमारत का आधार स्वस्थ लोकमत होता है इसलिए प्रबल एवं सजग लोकमत होना प्रजातन्त्र की सफलता के लिए अत्यन्त आवश्यक है।
4. सार्वजनिक शिक्षा के अभाव में कोई भी लोकतन्त्र स्थायी नहीं हो सकता। यह तो नहीं कहा जा सकता कि शिक्षित व्यक्ति ही योग्य होता है, पर आम तौर पर यह कहा जा सकता है कि शिक्षित व्यक्ति को गुमराह नहीं किया जा सकता। शिक्षित व्यक्ति अधिक समझदार तथा विवेकशील होता है।
5. शिक्षा के साथ–साथ यह भी आवश्यक है कि जनता में उच्चकोटि की नागरिकता और कानून को मानने की भावना होनी चाहिये।
6. वर्तमान युग में प्रजातान्त्रिक विकेन्द्रीकरण की सफलता के लिए समानता भीबहुत आवश्यक है। सामाजिक, आर्थिक एवम् राजनीतिक जीवन में समानता लाने क लिए यह अत्यन्त आवश्यक है। राष्ट्र के सभी मौलिक एवं महत्वपूर्ण प्रश्नों पर जनता की राय ली जानी चाहिये। किसी भी जनप्रतिनिधि को यह अधिकार नहीं होना चाहिये कि वह जनता

की इच्छा के विरुद्ध कार्य करे। यदि वे ऐसा करें तो उन्हें पद से हटाने की व्यवस्था होनी चाहिए। शासन का विकेन्द्रीकरण सही अर्थ में तभी सिद्ध होगा जब उसमें महिला सहभागिता पर्याप्त मात्रा में होगी।

पंचायत प्रशासन सम्बन्धी सुझाव

1. पंचायत के तीनों स्तरों के कार्यों एवं योजनाओं का सही तरीके से विभाजन होना चाहिये, जिससे व्यवस्था नियमित तथा प्रभावी रहे।
2. राज्य विकास सेवा का गठन किया जाना चाहिये।
3. राज्य सरकार द्वारा जिला परिषद को जिला स्तर पर ग्रामीण विकास की समस्त योजनाएँ, बजट व स्टाफ अनुसूची 3 के अनुसार हस्तान्तरित करने हेतु अधिसूचना जारी करनी चाहिये।
4. जिला प्रशासन को जिला प्रमुख के तथा खण्ड विकास अधिकारी को प्रधान के निर्देशानुसार कार्य करना चाहिये।
5. जिला प्रमुख को जिला प्रशासन से सम्बन्धित सभी अधिकारियों का वार्षिक मूल्यांकन प्रतिवेदन लिखने का अधिकार होना चाहिये।
6. जिले की विधायिका का दर्जा जिला परिषद को दिया जाना चाहिये।
7. जिला परिषद तथा पंचायत समिति की बैठकों में ग्रामीण विकास के सभी जिला स्तरीय अधिकारी, स्थानीय विधायक तथा सांसद अनिवार्य रूप से उपस्थित होने चाहिये।

प्रशिक्षण सम्बन्धित सुझाव

1. प्रशिक्षण के अन्तर्गत नई तकनीकी व संचार व्यवस्था का प्रयोग करना चाहिए।
2. प्रशिक्षण केन्द्रों की स्पष्ट नीति होनो चाहिए तथा पंचायती राज व्यवस्था को कारगर बनाने के लिए मानव संसाधनों का विकास भी आवश्यक है।
3. बैठकों में भाग लेने, प्रस्तुत विचारों को समझने तथा उन्हें संतुलित करने की क्षमता बढ़ाना।
4. महिलाओं को ग्राम पंचायतों के अधिकारों एवं कर्त्तव्यों का ज्ञान करवाना।

महिला को सक्षम बनाने हेतु सुझाव

1. महिलाओं के पंचायती राज में प्रतिनिधित्व को सार्थक सिद्ध करने के लिए महिला पंचायतों का गठन करना चाहिए। यह एक नवीन प्रयोग हो सकता है लेकिन इसके द्वारा हम महिलाओं को उनके वास्तविक अधिकार प्राप्त कराने में सफल होंगे। यह प्रयोग प्रथम बार एक पंचायत समिति में कम से कम पांच ग्राम पंचायतों में आरम्भ करना चाहिए। इसके लिए चुनाव से पूर्व ही यह तय कर लेना चाहिए कि किन–किन ग्राम पंचायतों को महिला ग्राम पंचायत बनाना है।
2. महिला मण्डल की स्थापना की जानी चाहिए जिससे महिलाएँ स्थानीय समस्याओं को खुलकर प्रस्तुत कर सकें।
3. महिला संगठनों तथा सरकारी अभिकरणों के द्वारा महिलाओं को जागरूक बनाने में तथा चुनावों में भाग लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।
4. पर्दा–प्रथा पर रोक लगानी चाहिए जिससे पंचायतों की बैठकों में वे खुलकर एवं स्वतंत्रतापूर्वक अपने विचार व्यक्त कर सकें।
5. समाज का भी महिलाओं के प्रति उदारवादी दृष्टिकोण होना चाहिए।
6. महिला प्रतिनिधि में आत्मविश्वास, और जागरूकता विकसित करने के लिए राज्य में पाठ्यक्रम आयोजित कर उन्हें प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।
7. अज्ञानता, अशिक्षा व संकीर्ण विचारधारा अवरोध उत्पन्न करते हैं, इसके लिए राष्ट्रीय साक्षरता अभियान, वयस्क शिक्षा कार्यक्रम और शिक्षा के प्रसार को जन आन्दोलन का रूप देना चाहिए, जिससे उनमें आत्मविश्वास प्रस्फुटित हो, साथ ही निर्णय लेने की क्षमता भी महिलाओं के अन्तर्गत जागृत हो।

अन्य सुझाव

1. जिला स्तर पर समस्त योजनाएं बनाई जाएं। बाहरी तत्वों का हस्तक्षेप पंचायती राज व्यवस्था में न हो, जिला परिषद् को इसका सम्पूर्ण दायित्व तथा कार्यभार सौंपना चाहिये, जिससे इन संस्थाओं पर राज्य सरकार का हस्तक्षेप न हो।
2. पंचायत समिति तथा जिला परिषदों के प्रमुख तथा प्रधानों के चुनाव के लिए मतदाता की संख्या कम है, धन तथा बल से यह आसानी से जीत जाते हैं, अच्छे समाजसेवी तथा योग्य व्यक्ति इस चुनाव से वंचित रह जाते हैं। प्रमुख तथा प्रधानों का चुनाव भी सरपंच की तरह ही करवाना चाहिये।
3. जनप्रतिनिधियों का उत्तरदायित्व बढ़ाने में जनता का जागरूक होना अनिवार्य है।
4. अधिकारी तथा कर्मचारी वर्ग के कार्य की समय–समय पर जांच होना आवश्यक है जिससे श्रेष्ठ कर्मी की पदोन्नति की जा सके।
5. पंचायतों की बैठक में महिला सरपंच व सदस्य का उपस्थित होना अनिवार्य होना चाहिये। यदि बिना कारण तीन बैठकों तक महिला सरपंच अथवा पंच, सदस्य उपस्थित न हों तो उसे पद से बर्खास्त कर देना चाहिये और पुनः चुनाव होना चाहिये।

अंत टिप्पणी

1. *शर्मा वीरेन्द्र, शर्मा ऋचा : 'पंचायती राज' यूनिवर्सिटी पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2008, पृष्ठ संख्या 95*
2. *पडलिया मुन्नी : (संपादक) 'भारत में पंचायती राज व्यवस्था' अनामिका पब्लिकेषन एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, दरियागंज, नई दिल्ली, 2008, पृष्ठ संख्या 9*
3. *पडलिया मुन्नी : (संपादक) 'भारत में पंचायती राज व्यवस्था' अनामिका पब्लिकेषन एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, दरियागंज, नई दिल्ली, 2008, : पृष्ठ संख्या 10*
4. *पडलिया मुन्नी : (संपादक) 'भारत में पंचायती राज व्यवस्था' अनामिका पब्लिकेशन एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, दरियागंज, नई दिल्ली, 2008, पृष्ठ संख्या 98*
5. *सुराणा राज कुमारी : 'भारत में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और नव पंचायती राज', राज पब्लिशिंग हाउस, जयपुर संस्करण–2000, पृष्ठ संख्या 50*

6. *सुराणा राज कुमारी : 'भारत में लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण और नव पंचायती राज', राज पब्लिशिंग हाउस, जयपुर संस्करण–2000, पृष्ठ संख्या 50*
7. *शर्मा वीरेन्द्र, शर्मा ऋचा : पूर्वोक्त, पृष्ठ संख्या 103*
8. *शर्मा वीरेन्द्र, शर्मा ऋचा : पूर्वोक्त,पृष्ठ संख्या 96*
9. *शर्मा वीरेन्द्र, शर्मा ऋचा : पूर्वोक्त,पृष्ठ संख्या 97*
10. *शर्मा वीरेन्द्र, शर्मा ऋचा : पूर्वोक्त,पृष्ठ संख्या 106*
11. *सुराणा राज कुमारी : पूर्वोक्त, पृष्ठ संख्या 22*
12. *शर्मा वीरेन्द्र, शर्मा ऋचा : पूर्वोक्त,पृष्ठ संख्या 23*
13. *शर्मा कविता : 'स्त्री सषक्तीकरण के आयाम', रजत प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2012, पृष्ठ संख्या 124*
14. *शर्मा कविता : 'स्त्री सशक्तिकरण के आयाम', रजत प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2012, पृष्ठ संख्या 125*
15. *शर्मा कविता : 'स्त्री सशक्तिकरण के आयाम', रजत प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2012, पृष्ठ संख्या 126*
16. *शर्मा कविता : 'स्त्री सशक्तिकरण के आयाम', रजत प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2012, पृष्ठ संख्या 127*
17. *शर्मा कविता : 'स्त्री सशक्तिकरण के आयाम', रजत प्रकाशन, नई दिल्ली, संस्करण–2012, पृष्ठ संख्या 128*
18. *विद्या के. सी.: 'पॉलिटिकल एम्पावरमेन्ट एट दी ग्रास रूट' कनिष्क पब्लिशर्स, नई दिल्ली, संस्करण–1997, पृष्ठ संख्या 60*